सार संक्षेप

“समकालीन हिन्दी कविता में साम्प्रदायिक आतंक विरोधी स्वर”

समकालीन हिन्दी कविता अतीत के अनुभव के साथ वर्तमान के संघर्ष के सुखद संयोग का नाम है। जिसके मूल में आस्था और सर्जनात्मकता है। समकालीन हिन्दी कविता का कवि वर्तमान युग चेतना का कवि है, वह वर्तमान समाज के अंग–अंग में व्याप्त होना चाहता है। कवि किसी भी समय या समाज का क्यों न हो यथार्थ का स्वर हमेशा कविता का वर्तमान होता है। वह सभी के अस्तित्व और संकटों पर अपनी धार रखता है।

समकालीन हिन्दी कविता तमाम अन्यायों से विचलित हुये बिना कदम आगे बढ़ाती है। संघर्ष और द्वन्द जो आधुनिक समाज की उपज है से आश्वस्त होने का प्रयास करती है। समकालीन कवियों की सामयिक संवेदना दृष्टि समकालीन कविता को समग्रता प्रदान करती है। समकालीन कविता साथ रहने के साथ–साथ हर प्रकार की परिस्थितियों से भिड़न्त का साहस भी रखती हैं।

समकालीन हिन्दी कविता संघर्ष शील होने के साथ–साथ यथार्थ के धरातल पर खड़ी होकर जनता का दर्द लिखने और उसकी संप्रेक्षणशीलता का प्रयास जनमानस को जागृत करने की दिशा में हमेशा प्रयत्नशील दिखाई देती है। समकालीन हिन्दी कविता संवेदना की अगाध तलाश है, लेकिन वर्तमान परिप्रेक्ष्य में मानवीय संवेदनाओं और सूक्ष्म भावनाओं को पहचानना, तलाशना एवं निर्वाहन करना आसान नहीं है, क्योंकि आज साम्प्रदायिक शक्तियां मनुष्यता को प्रभावित कर रही है। आधुनिक स्वरूप में साम्प्रदायिकता का चेहरा भयावह दिखाई पड़ता है, और साम्प्रदायिकता का यह विकृत रूप हमारे डीएनए को भी प्रभावित करता दिखाई पड़ रहा है।

डॉ॰ आलोक विहारी लाल
असि॰ प्रोफेसर ‘हिन्दी’
भारतीय महाविद्यालय, फर्रूखाबाद,
सम्बद्ध– छत्रपति शाहू जी महाराज वि॰ वि॰ कानपुर, उ॰ प्र॰
सम्पर्क :– 9450304001; मेल :–alokbiharilal@gmail.com

“समकालीन हिन्दी कविता में साम्प्रदायिक आतंक विरोधी स्वर”

समकालीन हिन्दी कविता का कवि वर्तमान युग चेतना का कवि है। वह वर्तमान समाज के अंग–अंग में व्याप्त होना चाहता है। इसीलिए समकालीन कविता के कथन में सभी द्वंदात्मक पक्षों का समन्वय दिखाई देता है। कवि किसी भी समय या समाज का क्यों न हो यथार्थ का स्वर हमेशा कविता का वर्तमान होता है। वह सभी के अस्तित्व और संकटों पर अपनी धार रखता है। समकालीन कविता साम्प्रदायिक वैश्विक प्रभाव तथा साम्प्रदायिक राजनीतिक आतंक की भी पहचान रखती है। लेकिन–

लोग है बेशर्म बोलो क्या करें
कुटिल इनके कर्म बोलो क्या करें
घृणा इनकी जाति है, और द्वेष इनका देश
ढोंग इनका धर्म, बोलो क्या करें। **‘अक्षर पर्व’ डॉ॰ रणजीत**

समकालीन कविता तमाम अन्यायों से विचलित हुये बिना कदम आगे बढ़ाती है, संघर्ष और द्वन्द जो आधुनिक समाज की उपज है, से आश्वस्त होने का प्रयास करती है। समकालीन कवियों की सामयिक संवेदना और दृष्टि कविता को समग्रता प्रदान करती है।

समकालीन हिन्दी कविता साथ रहने के साथ–साथ हर प्रकार की परिस्थितियों से भिड़न्त का भी साहस रखती है। क्योंकि मनुष्यता को भी बचाये रखने के कोशिश में प्रसिद्ध कवि अरूण कमल जी लिखते हैं कि–

एक ही तो है हमारे लक्ष्य
एक ही तो है हमारी मुक्ति
साथ–साथ मिलकर चलेगें हम
जहां गिरोगे तुम, वहीं रहेगें हम
जहां झुकोगे तुम, वहीं उठेंगे हम
लाओ, मुझे दे दो अपने साथ
चलो, मेरे पावों से चलो। **‘केवल अपनी धार’– अरूण कमल**

समकालीन कविता संघर्षशील होने के साथ–साथ यथार्थ के धरातल पर खड़ी होकर जनता का दर्द लिखने और उसकी संप्रेक्षणशीलता का प्रयास जनमानस को जागृत करने के लिए हमेशा प्रयासरत दिखाई देती है। समकालीन हिन्दी कविता संवेदना की अगाध तलाश है, लेकिन वर्तमान परिप्रेक्ष्य में मानवीय संवेदनाओं ओर सूक्ष्म भावनाओं को पहचानना, तलाशना, एवं निर्वाहन करना आसान नहीं है, क्योंकि आज साम्प्रदायिक शक्तियां मनुष्यता को प्रभावित कर रही है।

यह सम्प्रदाय आखिर है क्या? तो समझ में आता है कि इसका सीधा अर्थ है निष्पक्ष भाव से देना या बराबर देना या एक सा देना आदि–आदि सम्प्रदाय को हम विचारधारा भी कह सकते है। और जब हम विचारों की बात करते हैं तो परम्परा भी, क्योंकि ज्ञान गंगा गुरू और शिष्य द्वारा अनवरत प्रवाहित होती है, जो कि अनन्तम् है। और इस अविरल ज्ञान धारा को ही धर्म कहा जाता है। सम्प्रदाय इसका संकीर्ण रूप हो सकता है, लेकिन धर्म का नहीं। धर्म के तीन पक्ष माने जाते हैं। लोक पक्ष, सम्प्रदाय पक्ष, सामान्य मानव पक्ष। लेकिन सामान्य रूप से लोग सम्प्रदाय को ही धर्म मानने लगते हैं।

धर्म जीवन का केन्द्र बिन्दु ही नहीं बल्कि पूरा भारतवर्ष धर्म प्राण सम्पन्नता से युक्त देश है। धर्म ही सम्पूर्ण मनुष्य को दिशा देने का दिशा पुंज है, या कार्य करता है। भारतीय जीवन संस्कृति में धर्म मेरूदण्ड के दायित्व का निर्वाहन करता है। एक ही धर्म की अलग अलग परम्परा या विचारधारा को मानने वाले वर्गों को सम्प्रदाय कहते हैं। सम्प्रदाय के अन्तर्गत गुरू शिष्य परम्परा का निर्वाहन होता है जो गुरू द्वारा प्रतिपादित परम्परा को पुष्ट करती है। सम्प्रदाय का मतलब मत और पद्धति जबकि धर्म कर्तव्य पथ का अनुगामी होता है। धर्म क्रियात्मक है और सम्प्रदाय या मजहब विश्वासात्मक है। सम्प्रदाय के यही नियम एवं उसका परिपालन उसका सांप्रदायिक धर्म कहलाता है। और उस सम्प्रदाय के शास्त्रीय धर्म ग्रंथ एवं उसके प्रवर्तक महापुरूष कहलाते हैं। विश्व का शिष्ट जन समूह अनेक साम्प्रदायिक धर्मों का अनुयायी होता है। और सभी साम्प्रदायिक धर्मों के मानने वाले अपनी पद्धति, रीति, नियम को श्रेष्ठ बताते हुये मुक्ति का मार्ग सिद्ध करते दिखाई देते हैं। यही वैशेषिक साम्प्रदायिकता कहलाती है। लेकिन आधुनिक स्वरूप में साम्प्रदायिकता का चेहरा भयावह दिखाई पड़ता है। साम्प्रदायिकता का विकृत रूप एक आधुनिक परिघटना है। जो हमारे डीएनए को भी प्रभावित करती है। लेकिन–

आँख मिलाकर सच कहना होगा
सिर उठाकर सच कहना होगा।
ये राजनीति हमेशा हमें लूटी है।
सारे नेताओं की बातें झूठी है। **अज्ञात**

साम्प्रदायिकता एक भावना है, एक विचारधारा है जिसके अनुसार अपने–2 संप्रदायों के भिन्न–भिन्न हित निहित रहते है। साम्प्रदायिकता में नकारात्मक एवं सकारात्मक दोनों पक्ष विद्यमान होते हैं।

सांप्रदायिकता का सकारात्मक पक्ष किसी सम्प्रदाय के उत्थान के लिए मनुष्यता से परिपूर्ण प्रयास है। वहीं दूसरी तरफ नकारात्मक पक्ष दूसरे सम्प्रदायों के प्रति अमानवीय और अनेदखी करते हुये सिर्फ स्वयं के हितों की पूर्ति पर बल देना है। आधुनिक दौर में यह दृश्य अधिक दिखाई देते हैं।

भारत में सम्प्रदाय की साम्प्रदायिकता मुक्ति (मोक्ष) का मार्ग प्रदर्शित करती थी। वहीं आधुनिक युग में सम्प्रदाय की साम्प्रदायिकता में धर्म का चोला ओढ़ कर परस्पर युद्ध एवं विनाश के कारक भी बनते जा रहे हैं। यहां तक कि सामूहिक हत्या संघारक भी दिखाई देने लगे हैं। जबकि उन्हें नहीं पता कि साम्प्रदायिकता मानव की दुष्चक्रता एवं कष्टों से मुक्ति का उपाय है।

आधुनिक काल में यदि हम वास्तविक रूप से देखें तो सिर्फ सनातन धर्म को ही साम्प्रदायिक धर्म माना जा सकता है। हमारे सनातन धर्म सम्प्रदाय में सत्यनिष्ठा, अहिंसा, करूणा, परोपकार, परसेवा, इन्द्रिय निग्रह या संयम, अक्रोध एवं क्षमा, धैर्य एवं सहिष्णुता, विनम्रता, लोभहीनता, संतोष, पवित्रता (वाह्य/आंतरिक), निर्मलता, न्याय और विवेकशीलता एवं समता की भावना का विकास, वसुधैव कुटुम्बकम् का सिद्धांत आदि मानवोचित्त तत्व की समग्रता का भाव है। क्योंकि जो उदारता, व्यापकता, समस्त मानव जगत के कल्याण की भावना जिस सहजता के साथ दिखाई देती है वह किसी भी संप्रदाय में नहीं दिखाई पड़ती है। इसकी व्यापक उदारता के कारण ही आप हिन्दू रहते हुये भी सूफी हो सकते हैं, मुसलमान की तरह इबादत कर सकते हो या किसी अन्य मत या सम्प्रदाय का हिस्सा बन सकते हो, जबकि अन्य तथाकथित धर्म या सम्प्रदाय में यह स्वतंत्रता नहीं है।

मनुष्य ने जब जन्म लिया तभी से सम्प्रदाय बना और तभी से साम्प्रदायिकता का जन्म माना जाना चाहिये। साम्प्रदायिकता स्वरूप भिन्नता के साथ समय–2 पर प्रकट भी हुई चाहे राम, कृष्ण, बुद्ध, इस्लाम, ईसाई एवं स्वतंत्रता का काल या आधुनिक काल रहा हो। यह क्रम अनवरत है। लेकिन आधुनिक युग में कुछ सम्प्रदायों से आगे निकलने की प्रत्याशा दूसरे धर्म या सम्प्रदायों की निन्दा का मार्ग प्रशस्त करती दिखाई देती है। जो कि साम्प्रदायिकता की विकृति के रूप में सामने आती है। यदि कहा जाये कि आधुनिक राजनीति के उद्भव और विकास का परिणाम है विकृत साम्प्रदायिकता, क्योंकि राजनीति में बहुत से उदाहरण मिलते हैं जो विकृत साम्प्रदायिकता को बल प्रदान करते दिखाई पड़ते हैं। हालांकि यह अपवाद स्वरूप ही है, लेकिन है तो, यही चिन्ता का विषय है, जो कि नहीं होना चाहिये, और वर्तमान में यह समस्या वैश्विक हो रही है तो और चिन्ता का विषय है।

साम्प्रदायिकता के कारणों पर विचार करते है तो व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, समकालीन राजनैतिक, प्रशासनिक, मनोवैज्ञानिक, असमानता की पारिस्थितिकी पर ज्यादा निर्भर है। और यह सभी कारण साम्प्रदायिक आतंक की स्थिति उत्पन्न करने और उसे प्रोत्साहित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

साम्प्रदायिकता की आग कब और किसने लगाई इसकी तारीख बताना मुश्किल है। हां लेकिन आधुनिक भारत में एक क्षण था 1947 में भारत का विभाजन, 1984 में सिक्ख विरोधी हत्या का तांडव, 1989 में मुस्लिम चरमपंथियों द्वारा हजारो कश्मीरी हिन्दू, बहन बेटियो 'गिरिजा टिक्कू' जैसी नृशंस हत्या, बलात्कार, निष्कासन, 2002 में गोधरा हत्याकांड, मुस्लिम चरमपंथियों द्वारा निर्दोष रामभक्तों को ट्रेन में बंद कर जलाकर मार देना, 2013 में मुजफ्फरनगर दंगे और 2014 से 2020 तक पूरे देश में

लगभग चार हजार साम्प्रदायिक दंगे जिसने हजारों निर्दोष लोगों की हत्या, 2021 में जहांगीर पुरी दिल्ली में हनुमान जयन्ती के मौके पर भड़की हिंसा (मुख्य अभियुक्त – मो॰ अंसार), महाराष्ट्र के पालघर में चरमपंथियों द्वारा सन्तो की नृशंसता पूर्वक हत्या, उदयपुर राजस्थान में कन्हैया लाल की बड़ी बेरहमी से गला काटकर हत्या, उदयपुर–करौली, जोधपुर, अलवर में हुई साम्प्रदायिक हत्या का मामला पश्चिम बंगाल में एक पूरे परिवार को जिहादियों द्वारा घर में बद कर बच्चों, महिलाओं सहित जला कर मार देना आदि इस साम्प्रदायिक आतंक की बर्बर घटना। 4 अगस्त को पुलवामा में विहार के प्रवासी मजदूर की हत्या। जून को बड़गांव में 17 साल के प्रवासी मजदूर की हत्या।जून को राजस्थान के बैंक मैनेजर को आतंकवादियों ने भून दिया। 31 मई को कुलगांव में टीचर रजनी बाला की हत्या। 25 मई को टीवी एक्ट्रेस अमरीक भट्ट की बड़गांव में हत्या। 24 मई को पुलिस कर्मी की हत्या, इस हमले में उसकी सात साल की बेटी भी घायल हुई। 17 मई को वारामूला में 52 साल के कारोबारी की हत्या। 12 मई को कश्मीरी पण्डित कर्मचारी राहुल भट्ट की हत्या। 12 मई को ही एक पुलिस कर्मी रियाज की हत्या।

अभी 16 अगस्त 2022 दिन मंगलवार को दक्षिण कश्मीर के शोपिया में आतंकवादियों ने अपने बाग में काम कर रहे दो हिन्दू चचेरे भाईयों पर अन्धाधुन्ध गोलाबारी कर मौत के घाट उतार दिया। स्वतंत्रता दिवस के दिन बड़गांव में आतंकवादियों ने कश्मीरी हिन्दुओं के घर पर ग्रेनेड से हमला किया, इस हमले में कर्ण कुमार नामक युवक गम्भीर रूप से जख्मी हुआ। घाटी में रह रहे हिन्दुओं और सिक्खों को निशाना बनाया जा रहा है। यदि इस सिलसिले को रोका नहीं गया तो कश्मीर में बचे खुचे हिन्दुओं को भरोसा दिलाना कठिन हो जायेगा कि वह सुरक्षित है।

शोपियां का चेटीगांव में तीन हिन्दू परिवार भी आतंकियों को वर्दाश्त नहीं स्थिति यहां तक पहुंची है। अभी 17 अगस्त को पटहेरवा थाना क्षेत्र के नरहवा गांव में सुबह शाखा लगाकर वापस लौट रहे स्वयं सेवकों पर मुस्लिम चरमपंथी युवकों द्वारा हमला। यह सब निरन्तर जारी है।

इस प्रकार के योजनावद्ध साम्प्रदायिक आतंक को किस न्याय की कसौटी पर रखेंगे। कहीं नरमपंथियों एवं कट्टरपंथियों के बीच की धुंधलीरेखा को मिटाने का प्रयास तो नहीं हो रहा है। आज जो अस्वाभाविक, असामाजिक कट्टरता की जिहादी चेतना नजर आ रही है वह केवल मतिभ्रम नहीं है। यह वास्तविक है और लगातार बढ़ रही है। समाज के एक वर्ग द्वारा मौन स्वीकृति या अनुमोदन के बिना साम्प्रदायिक आतंक का यह सिलसिला नहीं चल सकता।

साम्प्रदायिकता के मूल कारण तो बहुत है किन्तु इसे समझने का एक आम नजरिया समाज में रूढ़ हो गया है, वह इसके मूल में केवल धार्मिक कारण तलाशता है। साम्प्रदायिक आतंक धार्मिक परिघटना नहीं है, लेकिन यह एक धर्म के मानने वाले समूह के स्वार्थों से जुड़ी अवश्य है।

समस्त प्रकार की हिंसक घटनाओं पर नजर डाले तो आसानी से समझा जा सकता है कि यह वर्ग विशेष की हिंसक प्रवृति है। वर्तमान में इस विचारधारा ने धार्मिक प्रतीकों के जरिये जन–उन्माद

पैदा कर बहुसंख्यक समाज की सामाजिक चेतना पर भी कब्जा करने का प्रयास प्रारम्भ कर दिया है। जन चेतना को दूषित करने का काम उसकी मूल विचारधारा के निर्माण, उसके बड़े पैमाने पर प्रचार–प्रसार के साथ करने का प्रयास जारी है। आज समाज में सांप्रदायिक आतंक का जहर फैलाने के हर मौके की तलाश की जा रही है। आज सामाजिक जनचेतना धीरे–धीरे साम्प्रदायिक आतंक चेतना के कब्जे में आती दिख रही है।

आज लोकतन्त्र और इस्लाम मेल नहीं खा रहा है, क्योंकि इस्लामिक उपदेश के ज्यादातर हिस्से उग्रवाद को जन्म देते दिखाई पड़ते हैं। वह जेहाद को भी गलत अर्थों में प्रोत्साहित करते हैं। जो गैर मुस्लिम के खिलाफ है। और एक ऐसा धर्म बन कर उभर रहा है जो लोकतंत्र और व्यक्तियों की स्वतंत्रता के खिलाफ है। आज हमारे समाज में सांप्रदायिक ताकतें अपने खूनी पंजों से सामाजिक सौहार्द का गला घोंट रही है। साम्प्रदायिक आतंकवाद आज सबसे बड़ी चुनौती है। यह विघटनकारी तत्त्व जिस सुनियोजित रूप से देश को साम्प्रदायिक आतंक की प्रयोगशाला बनाने में जुटें हैं, यह भविष्य के लिये बड़े ही खतरनाक संकेत हैं। हम विगत कुछ समय से साम्प्रदायिक आतंक का नंगा नाच देख भी रहे हैं।

वर्तमान में कुछ धूर्त लोग एवं धूर्त राजनीतिज्ञ भी अपने स्वार्थ साधने के लिए देश और समाज को सांप्रदायिक आतंक की आग में झोकने से भी परहेज नहीं करते। वर्तमान के तथाकथित धूर्त और धूर्त राजनीतिज्ञों की प्रकृति की ओर इशारा करते प्रसिद्ध कवि राजेश जोशी की पंक्तियां सटीक ठहरती हैं–

खुश रहने और सुरक्षित रहने का सबसे आसान तरीका यह था
कि हवा के रुख पर मुण्डी हिलाने वाले हरे भरे दरख्त में
बदल लें अपने आप को'दो पंक्तियों के बीच में' **राजेश जोशी**

समकालीन राजनीति को कोसने का यथार्थ प्रस्तुत किया है। सत्ता में लोक कल्याण की भावना न के बराबर होती है, बल्कि विडम्बना तो यह है कि वह नकाब पोश की तरह घूमती फिरती रहती हैः और समकालीन कविता ऐसे नकाबपोशों को बेनकाब करती है। वर्तमान व्यवस्था पर चोट करते हुए लिखते हैं कि शासन व्यवस्था नींद में चलते हुये आदमी सी हो गई है।साम्प्रदायिक आतंक साम्प्रदायिक राजनीति का सबसे बड़ा हथियार होती है, इसके परिणाम भी भयावह होते हैं। समकालीन कवि राजेश जोशी जी साम्प्रदायिक आतंक के दुष्परिणाम पर लिखते हैं–

जब तक मैं एक अपील लिखता हूँ
आग लग चुकी होती है सारे शहर में
हिज्जे ठीक करता हूँ जब तक अपील के
कर्फ्यू का एलान करती घूमनें लगती है गाड़ी

अपील छपने जाती है जब तक प्रेस में
दुकाने जल चुकी होती हैं
मारे जा चुके होते है लोग
छपकर जबतक आती है अपील
अपील की जरूरत खत्म हो चुकी होती है। **'राजेश जोशी'**

राजेश जोशी की यह कविता साम्प्रदायिकता के चरित्र का बहुत मार्मिक चित्र हमारे सामने प्रस्तुत करती है। क्योंकि साम्प्रदायिक आतंक का कोई चेहरा नहीं होता, समाज में व्याप्त धर्मांधता उसको हवा देती है, और बेकसूर मारे जाते हैं। यह कविता इसी साम्प्रदायिक आतंक के इसी चरित्र की तरफ हमारा ध्यान खींचती है। और जब तक हम इसके खिलाफ एकजुट होते हैं तब तक सबकुछ तबाह हो चुका होता है। यह एक ऐसी सच्चाई है जिसका सामना हमें मिलकर करना होगा। इस क्रूरतम सच्चाई का सामना किये वगैर अपने नागरिक होने का दम्भ नहीं भर सकते। हम यह कहकर अपनी जान नहीं छुड़ा सकते कि मैं उस पूरे कुकृत्य में शामिल नहीं था, इसलिए मेरी जवाबदेही नहीं बनती। अगर सचमुच हम ईमानदार नागरिक है, मनुष्यता पर हमारा विश्वास है, मानवीय मूल्यों को हम जीते हैं तो फिर इस साम्प्रदायिकता के आतंक के खिलाफ हमें खड़ा होना ही पड़ेगा।

साम्प्रदायिकता के आतंक का कोई चेहरा नहीं होता वह सिर्फ आतंकी होता है, बर्बर होता है। बर्बरता के लिए उसके पास कोई तर्क भी नहीं होता। वे सिर्फ मनुष्यहन्ता होते हैं, उनके पास घृणा होती है क्योंकि वे सिर्फ बर्बर होते हैं। साम्प्रदायिकता के सन्दर्भ में हमें यह जान लेना चाहिये कि इनके स्वार्थों की पूर्ति हेतु जन शक्ति छिन्न–भिन्न करने का षडयंत्र है। ऐसी परिस्थितियों में समकालीन रचनाकार का दायित्व और बढ़ जाता है। समकालीन हिन्दी कविता में इन षडयंत्र कारी शक्तियों की भयावहता को उजागर किया है। कवि लिखता है कि–

यह जो सड़क पर खून बह रहा है
इसे सूंघ कर देखो
और पहचानने की कोशिश करो
यह हिन्दू का है या मुसलमान का
किसी सिक्ख का या ईसाई का
किसी बहन या भाई का
सड़क पर इधर उधर पड़े
पत्थरों के बीच में दबे
टिफिन कैरियर से
जो रोटी की गंध आ रही है
वह किस जाति की है। **'पहचान' कुमार विकल**

यह कविता उस नब्ज पर उंगली रखती है जहां से हम मनुष्य होने की यात्रा शुरू करते हैं। यह कविता एक बार साम्प्रदायिक आतंक के विरूद्ध मानवता की पहचान विकसित करने में हमारी मदद करती है। साम्प्रदायिकता की घृणित योजना का परिणाम है हिंसा, हत्या का निर्मम आतंक। उन्हें यह नहीं दिखाई देता।

दंगो में विधवा हुई औरतें
अब नहीं करती
किसी के सामने बखान अपने दुःखों का
नहीं चाहती वे किसी की
थोड़ी सी सहानुभूति और संवेदना
नहीं जानना चाहती
दंगा पीड़ितों के मुआवजों के बारे में
वे दिन भर घर के दुःख भरे कमरों में
डोलती रहती है
इधर से उधर बेचैन
रह लेती है किसी तरह
जले हुये स्वप्नों और सीलन भरी दीवारों के बीच
वह सचमुच अब नहीं चाहती
किसी से थोड़ी सी सहानुभूति और संवेदना। **'दंगों में विधवा हुई औरतें 'नन्द कुमार कंसारी'**

समकालीन हिन्दी कविता दंगों के बाद के वास्तविक और संवेदनशील हलको की तरफ हमें ले जाती है। सचमुच दंगों से प्रभावित उन घरों में हम जाकर देखें तो हमें पता चलेगा कि उन घरों में लाचारी और अदृश्य होती रोशनी किस तरह गड़बड़ होकर समूचे पारिवारिक समय को कब्रगाह में तब्दील किये दे रही है। यह सही है और शायद ज्यादा कटु भी कि इन दंगों ने हमें अपने पर से ही विश्वास की चादर को उठा लिया है। हर आहट में सांप्रदायिक आतंक की शक्ल दिखाई देती है। हम दरवाजा खोलने के पहले डरते है कि कहीं आने वाला बर्बर आतंकी तो नहीं। हम जो कभी हथियार नहीं उठाते, घर में पड़ी हुई किसी चीज को हथियार बनाकर आने वाली शंकालु आहट से मुकाबला करने के लिए तैयार हो जाते हैं। हमें अपने पड़ोसी पर ही भरोसा नहीं होता कि कहीं वह दंगाई आतंकी से मिला हुआ तो नहीं है। (कश्मीर फाइल्स फिल्म में प्रदर्शित 'गिरिजा टिक्कू' के प्रति हुई बर्बरता जैसी अनेकों घटनायें) अभी हालिया घटना उदयपुर(राजस्थान) की जिसमें सरेआम कन्हैया कुमार की हत्या जिस अंदाज में की गई इन सभी घटनाओं से मनुष्य को मनुष्यता का जो भरोसा था वह खण्डित हुआ है। कुल मिलाकर ऐसा भयावह दृश्य उपस्थित हो जाता है कि हमें अपनी छाया से भी

डर लगने लगता है। देवी प्रसाद मिश्र ने इस आहट जनित भय का अद्भुत संवेदनात्मक परिचय अपनी इस कविता के माध्यम से दिया है—

कोई है जो दरवाजा खटखटाता है
मैं और मेरा साथी एक दूसरे को देखते हैं
कौन मैं पूछता हूँ,जो दरवाजा खटखटा रहा है
खटखटाता ही रहता है
अपने समय में बहुतायत में पायी जाने वाली सावधानी के साथ
मैं दरवाजा खोलता हूँ जरा सा
मेरा साथी चौकन्ना रहता है
दरवाजा थोड़ा और खुलता है, फिर पूरा खुल जाता है
जो दरवाजा खटखटाता था अन्दर आ जाता है
दीवार से सटकर बैठ जाता है
वह हमारा पुराना दोस्त है
उसे देखकर हम खुश है और शर्मसार भी
और सफाई देने की कोशिशें कर रहे हैं
कि रामेश्वर जो मारने आते हैं
दरवाजा वे भी ऐसे ही खटखटाते हैं **'आतंक' देवी प्रसाद मिश्र**

ऐसे आतंक पूर्ण समय में हम जी रहे हैं। यह सही है कि राजनीति बहुत चालाकी से मजहबी मूल्यों को साम्प्रदायिक आतंकी, जेहाद में बदल देती है। राजनीति तथा राजनीति के तथाकथित मजहबी उन्मादी मोहरे, जेहादी उन्माद पैदा करने वाले किराये के आतंकी किया करते है। सचमुच हम ऐसे समय में जी रहे है।

"चारो ओर की गलियों से निकले थे चाकू और डण्डे
दौड़ते हुये चौराहे की ओर, कितनी सारी भीड़
अचानक पैदा हो गई थी वहां
जैसे सड़कें फाड़ कर निकल आये हों लोग
एकाएक जैसे फिर से जीवित हो उठी हो दफन सदियां
हवा मे रोपती हुई चीखें और विलाप
शहर ने पहन लिया था स्वर का चेहरा
और सड़कों का सांप सूंघ गया था
सारी दूर मंडराती रहती थी
पुलिस की गाड़ियों की आवाज

अपने आप में सिमटकर बैठ गये थे सारे मकान
मानों वे मकवरे हों
क्या वह एक मरा हुआ कबूतर था
या अंधेरा चेहरा था और हमारे घरों का। **'धूप घड़ी संग्रह'–राजेश जोशी**

सचमुच आम जन को इन दंगों से कोई लेना देना नहीं है। क्या हम नहीं जानते कि साम्प्रदायिक आतंक आदि में तोड़फोड़ और मारकाट करने वाले लोग प्रायः असभ्य और अपराधी किस्म के लोग होते हैं। साम्प्रदायिकता बढ़ रही है, इसका एक कारण क्या यह नहीं है कि इनकी संख्या जानबूझकर बढ़ाई जा रही है। क्योंकि कोई भी सच्चा आस्थावान, धार्मिक अशिक्षित, गरीब, बेरोजगार होने पर भी ऐसे हिंसक और अमानवीय कुकृत्य नहीं कर सकता। तो वह ऐसी कौन सी ताकत है। जो लोगों को असभ्य, अपराधी और आतंकी बनाकर साम्प्रदायिक हिंसा में मरने–मारने के लिए झोंक रही है। समकालीन हिन्दी कविता इसकी भी पड़ताल करती है।

इस गुण्डा समय में जानवर होकर भी
घृणा का पात्र हुये बिना नहीं रह पाऊंगा मैं
कभी हिन्दू होकर किसी हिन्दू गुण्डे की प्रतीक्षा करूंगा।
कभी मुसलमान होकर किसी मुस्लिम गुण्डे का इंतजार।
जो मुझे जितनी बार आ–आर कर बचायेंगे
उतनी बार मारा जाऊंगा मैं
सारी व्यवस्थाओं का भरोसा छीनकर
इस गुण्डा समय में न मैं मन्दिर में रहना चाहता हूँ, न मस्जिदों में
मैं एक रहने योग्य घर में रहते हुए
करने योग्य बात कहना चाहता हूँ
कि मैं धार्मिक नहीं मार्मिक सम्बन्ध हूँ
मैं मनुष्य हूँ, आदमी हूँ, व्यक्ति हूँ, नागरिक हूँ। **'गुण्डा समय'लीलाधर जगूड़ी**

समकालीन हिन्दी कविता इस धार्मिक उन्माद के चलते पैदा हुये आतंकी गुण्डे समय में मानवीयता को बचाये रखते हुये मार्मिक सम्बन्धों की तलाश करती है। हमारे मनुष्य होने की मूल धारणा को बलवती करती है। मनुष्य का मनुष्य पर भरोसा हो, विश्वास हो, आतंक रहित समाज हो, प्रेम सद्भाव का वातावरण हो सके इसके लिए भूमिका तैयार करती है। और साम्प्रदायिक शक्तियों को चुनौती देती है कि–

हमारी मौत बतायेगी कि
कोई मरता नहीं अकेले
तुम्हारे सोचे नतीजो से ऊपर है हमारी जिन्दगी

हमें काटते रहे बारम्वार
उगते रहेगें हम
तुम्हारे अन्त तक। **'सत्ता से'—हेमन्त कुकरेती**

इस तरह समकालीन हिन्दी कविता न सिर्फ साम्प्रदायिक आतंक और उसके दुष्प्रभाव पर चोट करती हुई ऐसे व्यक्ति के पक्ष में खड़ी होती है जो न हिन्दू है, न मुसलमान केवल मनुष्य है। जिसका देश संकीर्ण धर्मवाद की जमीन से काफी ऊपर है। जहां की मिट्टी में मनुष्यता की गंध व्याप्त है। जहां आत्मीय रिश्तों की बहुत ऊंची मीनारे मौजूद है। जो साम्प्रदायिकता से ऊपर उठकर मनुष्य का सृजन करती है। उनके लिये धर्म, जीवन—मरण का प्रश्न नहीं बल्कि मनुष्य निर्माण का साधन है। वह बताती है कि साम्प्रदायिक आतंक की काट केवल भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों का विकास है, समाज का साझापन है। साम्प्रदायिकता का प्रसव करने वाली संस्थाओं के विरूद्ध संघर्ष का स्वर सभी का नैतिक दायित्व है। क्योंकि यह अत्यंत घातक रोग नासूर की तरह हमारे भारतीय समाज में उग आया है। और आत्मीयता के ऊपर, रिश्तों और सम्बन्धों के ऊपर अनचाही वेल की तरह फैल गया है। जिसने जाति और धर्म, कौम के नाम पर दोस्त और दुश्मन की पहचान हमसे छीन ली है। समकालीन हिन्दी कविता इस सबके कारणों की पड़ताल करती हुई "बसुधैव कुटम्बुकम" का सघन रचनात्मक दस्तावेज हमारे सामने प्रस्तुत करती है।

आज अंधेरे को शक्तियां विनाश के अगले चक्र की तैयारी में लगी हुई है, निरन्तर चुपचाप इन मानवद्रोही शक्तियों के हृदय परिवर्तन के लिए आर्तनादों का कोई मतलब नहीं है। समकालीन हिन्दी कविता साम्प्रदायिक आतंक की चालों को पहचानती है।

हत्यारों के गिरोह का एक सदस्य हत्या करता है, दूसरा उसे दुर्भाग्यपूर्ण बताता है
तीसरा मारे गये आदमी का दोष गिनाता है
चौथा हत्या का औचित्य ठहराता है
पाँचवा समर्थन में सिर हिलाता है
और अंत में सब मिलकर बैठक करते हैं
अगली हत्या के सम्बन्ध में। **'हत्यारों का गिरोह' राजेन्द्र यादव**

एक बात और क्या ऐसी हिंसा के लिए सिर्फ हत्यारें जिम्मेदार हैं? या जो प्रगतिशीलता का मुलम्मा चढ़ाकर ऐसे तत्वों को खाद—पानी देते हैं, वे क्या कम दोषी है। विभाजन कारी राजनीति— जिसके तुष्टीकरण के पैतरे और समाज को दो फांक करने की कोशिशों का सिलसिला जिन्ना से लेकर आज तक जारी है। समकालीन हिन्दी कविता इस साजिश का मुखौटा पहचानती है। वह उसे बेनकाब करती है। बस दुःख इस बात का है कि संघर्ष करने वाले लोग, इस दुनिया को बनाने में लगे लोग, कम होते जा रहे हैं। इस बात की पीड़ा है कि मनुष्यता के मोर्चे पर लड़ने वाले योद्धाओं की संख्या कम होती जा रही है। लेकिन विश्वास है कि यही थोड़े से लोग जो जीवन का सत्व खोजते रहते हैं;

असफलताएं जिनके महत्व को कम नहीं कर पाती, और जो साम्प्रदायिक आतंक से उभरे इस काले समय में हिन्दू या मुस्लिम होकर शर्मिन्दा हुये है। समकालीन हिन्दी कविता ऐसे लोगों को बचाये रखना चाहती है। वह घृणा और हिंसा फैलाने वाले लोगों को बेनकाब करती हुई संघर्ष जैसे बड़े मानवीय मूल्य स्थापित करती है और इस बात का विश्वास करती है–

कि आग लगाने वालों
दूसरे लोगों के घर मत जलाओ
आग मनुष्य की अच्छाई है
यह आत्मा में निवास करती है
और हमारा भोजन पकाती है
अत्याचारियों तुम्हे अत्याचार करते बहुत दिन हो गये
जगह–जगह पोस्टरों और अखवारों में छपे
तुम्हारे चेहरे कितने विकृत है
झाग उगलते मुंह से तुम जो कुछ कहते हो
उससे सिर्फ यह पता चलता है
कि नष्ट हो जाएगा हमारा यह सुन्दर संसार। **'दूसरे लोग' मंगलेश डबराल**

समकालीन हिन्दी कविता समस्त प्रकार की साम्प्रदायिकता एवं ध्रुवीकरण का विरोध करती है। सत्ता की अराजकता, मनमानी, तानाशाही, भ्रष्टाचार, छवि की चिन्ता, शासन की सरकारी व्यवस्था, न्यायपालिका, मजहब के ठेकेदार, मजहब का उपयोग स्वार्थ सिद्धि के लिये समाज में विभाजनकारी, विध्वंसक ताकतें मौजूद है, जो समाज को कई स्तरों पर विघटित कर रही है। साम्प्रदायिक आतंक ने देश का सबसे ज्यादा नुकसान किया है। समकालीन राजनीति के ढोंगी, समाजवादी चरित्र, स्वार्थ लिप्सा, परिवार वाद, संवैधानिक संस्थाओं पर अविश्वास, चरित्र हीनता, लोकतंत्र के नाम पर परिवार तंत्र, भारतीयता के साथ छलःकपट पूर्ण आचरण आदि मुखोंटों को उजागर करने का कार्य समकालीन कविता का मुख्य उद्देश्य रहा है। साम्प्रदायिक आतंक के खिलाफ संघर्ष कई मोर्चों एवं स्तरों पर किया जाना आवश्यक है।

न जाने क्यों, आज के परिवेश में
यथार्थ हो जाता है, हरबार गूंगा
और, अपने अधिकारो हेतु
पात्र हर कोई, हो जाता है
हर बार वौना, पत्रवत घिसी पिटी,लकीरों पर
आयु के सोपान चढ़ते हुये जब कभी भी
तलाशे है कारण, तो प्रश्न चिन्ह, और उभरे है

उत्तरों के रूप में, लगता है, इसी उलझन में
कट जायेगी आयु सारी, और सुरक्षित, रहने की भावना से ही
होता रहेगा पीड़ित, हमारा चिंतन।
आखिर कब तक, इस अंधी व्यवस्था हेतु
यूँ ही बने रहेगें, हम गांधारी आखिर कब तक। **'आखिर कब तक' कुलभूषण कालरा**

ऐसे समय में जबकि साम्प्रदायिक शक्तियां तमाम समस्याओं को दरकिनार कर देश को साम्प्रदायिक दंगों की आग में झोंकना चाहती हैं, और लोगों की भावनाओं को भड़काकर अपनी राजनीतिक महत्त्वाकांक्षा पूरी करना चाहती हैं, के खिलाफ प्रतिरोध की संस्कृति विकसित करने की जरूरत है। क्योंकि इस संस्कृति से ही साम्प्रदायिक आतंक का मुकाबला किया जा सकता है। इस प्रयास में प्रगतिशील राजनीतिक, सामाजिक संगठनों के साथ–साथ वैयक्तिक स्तर पर भी मानवता को बचाने के लिए हमें साथ चलना होगा।

साम्प्रदायिक आतंक इन्द्रधनुषी की तरह बहुत सारे रंगों और बहुत सारे चरित्र वाले नेताओं से मिलकर बनती है। हमें साम्प्रदायिक शक्तियों को उनके अनुयायियों से अलग करके देखना होगा, क्योंकि ये अनुयायी ही अपने नेताओं के कहने और बहकावे में साम्प्रदायिक आचरण करते हैं। साम्प्रदायिक आतंक के खिलाफ राजनीतिक, शैक्षणिक और सैद्धांतिक आधार पर सतत् जनआंदोलन की जरूरत है। साम्प्रदायिक आतंक से निपटने में हमारी पूर्ववर्ती सरकारों ने वोट बैंक को ध्यान में रखते हुये तुष्टिकरण की नीति पर चलने के कारण इस दिशा में काफी कमजोरी दिखाई है। इन कमजोरियों को स्वीकार करने में हमें हिचकना नहीं चाहिए। साथ ही ध्यान रखा जाना चाहिए कि उनके किसी भी कदम से साम्प्रदायिक शक्तियों को बढ़ावा न मिले। हमें लोगों की नजर में साम्प्रदायिक आतंक का असली चरित्र लाना पड़ेगा।

इस दिशा में जहर बोने वालों, संक्रमण फैलाने वालों का इलाज जरूरी है। साम्प्रदायिक आतंक भारतीय समाज के राजनीति का एक सड़ा हुआ घाव है, समय के साथ–साथ यह बीमारी बढ़ती जा रही है। अतः आज आवश्यकता इस बात की है, कि इस कोढ़ को जड़ समेत नष्ट करने की। कविता का साम्प्रदायिक आतंक विरोधी स्वर जितना तीखा और तेज है उतना ही उसका मूल स्वर और इस समकालीन सुन्दर संसार को बचाये रखने का संकल्प भी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1 भारत में साम्प्रदायिकता : इतिहास और अनुभव – असगर अली इंजीनियर
2 साम्प्रदायिकता : एक सचित्र परिचय – राम पुनियानी
3 हिन्दू राष्ट्रवाद और उसका यथार्थ – कृष्णा झा
4 साहित्य का सामयिक सरोकार– डॉ॰ प्रमोद कोव प्रत

5 संस्कृति भाषा और राष्ट्र – रामधारी सिंह दिनकर

6 साम्प्रदायिक राजनीति : तथ्य और मिथक – राम पुनियानी

7 पांचजन्य अंक – जुलाई 2022

8 इतिहास और राष्ट्रवाद – वैभव सिंह

9 अक्षर पर्व – डॉ॰ रणजीत

10 केवल अपनी धार– अरूण कमल

11 दो पंक्तियों के बीच में– राजेश जोशी

12 यह ऐसा समय है सम्पादक– असद जैदी, विष्णुनागर

डॉ॰ आलोक विहारी लाल

असि॰ प्रोफेसर 'हिन्दी'

भारतीय महाविद्यालय, फर्रूखाबाद,

सम्बद्ध– छत्रपति शाहू जी महाराज वि॰ वि॰ कानपुर, उ॰ प्र॰

alokbiharilal@gmail.com

9450304001